मन-संयम

सुख-भोग की स्पृहा में मन नित इच्छाएं उत्पन्न करता रहता है। इन इच्छाओं की पूर्ति कुछ समय के लिए मन को सुख की अनुभूति कराती हैं परन्तु अधिकांशतः मनुष्य इन इच्छाओं को पूरा करने में ही लगा रहता है और सुखी नहीं हो पता *(देखें: हम न भूलें -13)*। तो क्या मनुष्य को सुख-भोग की स्पृहा का त्याग कर देना चाहिए ?

हमें यह समझने की आवश्यकता है कि यह सुख-भोग जिसके लिए मन निरंतर भावों को जन्म देता रहता है, इन्द्रिय-सुखों का उपभोग है। मन की चंचलता हमें **'सम'** की स्थिति (जब सुख-दुःख एक समान लगे और उसका मन पर कोई प्रभाव न पड़े) में आने नहीं देती और हम सुख-दुःख के पाटों के बीच पिसते रहते है और चिर-आनंद नहीं पा पाते हैं। जब तक मन संयम में नहीं होगा चिर-आनंद हमसे बहुत दूर रहेगा।

यदि मनुष्य का मन संयम में न हो तो मनुष्य के जीवन में उसकी मानसिक विकृति एक भयानक परिणाम हो सकता है। उसके जीवन में ऐसी कई दुर्भाग्यपूर्ण बातें हो सकती हैं जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से स्वयं उसे, अन्य प्राणियों को, वातावरण, प्रकृति आदि को हानि पहुंचती हों। इतिहास में देखें तो तो पाएँगे कि मन के संयम में न होने से अत्यधिक महत्त्वाकांक्षा व अभिलाषा के कारण कितने ही युद्ध हुए, कितनी ही सभ्यताओं का पतन हुआ भले ही वे प्रगतिशील रही हों।

मन का असंयम मनुष्य के व्यक्तित्त्व के पूर्ण विकास में बाधक होता है। जिसका मन संयम में नहीं है वह अस्वाभाविक मानसिक विकारों से ग्रस्त हो सकता है, भीतरी द्वन्द के कारण उसका मानसिक संतुलन बिगड़ सकता है। अति संभव है कि ऐसा मनुष्य अत्यंत अनुकूल परिस्थितियों में भी अपनी संभावनाओं को न ही पहचान पाए और न ही अपेक्षाओं की पूर्ति कर पाए। जिसे अपने मन पर नियंत्रण नहीं उसे मन की शांति (भावों की लहरों का न उठना; शांत हो जाना) नहीं मिल सकती। जिसका मन शांत नहीं उसे आनन्द नही मिल सकता। ऐसा व्यक्ति भावनाओं, वासनाओं और तनावों का ग्रास हो कर संभव है कि दुःसाध्य रोगों (मानसिक) से पीड़ित हो जाए अथवा एक अपराधी ही बन जाए।

मनोनिग्रह के बिना मनुष्य को किसी भी क्षेत्र में न तो स्थायी उन्नति प्राप्त होती है और न ही समृद्धि व शांति। मन के संयम के अभाव में मनुष्य प्राप्त समृद्धि से भी हाथ धो बैठता है। हमें अपने मन व मस्तिष्क में यह बात अंकित कर लेनी चाहिए की हमारे समस्त भावी जीवन का ढांचा इस पर निर्भर करेगा कि हमने अपने मन को वश में कर लिया है अथवा नहीं। जीवन में शरीर की आधाररूप आवश्यकताओं को पूरा करने के उपरांत अन्य बातें भी महत्त्वपूर्ण हो सकती हैं परन्तु जीवन में व्यक्तित्त्व, समृद्धि, लक्ष्य व शांति की पूर्ण प्राप्ति हेतु मनोनिग्रह से बढ़कर महत्त्व की कोई बात नहीं हो सकती। यदि हम इसको समझ लें और इस पर विश्वास कर लें तो हम मन को वश में करने की अपनी इच्छा-शक्ति को दृढ़ बना सकते हैं।

जन-साधारण के लिए 'सुख-भोग' की लालसा की संतुष्टि के बिना यह जीवन संभव नहीं है। यह सुख-स्पृहा हममें स्वाभाविक होने के कारण हमारे मन-मस्तिष्क में इस गहराई से बैठी हुई है कि इसे अत्यंत कठिनाई से ही निकाला जा सकता है। अधिकांश मानव-जाति के समक्ष तो यही एक प्रश्न है कि यदि सुख-भोग के लिए न जीयें तो किसके लिए जीयें? 'सुख-भोग' की यह लालसा मनुष्य में एक जीवंत शक्ति है और मनुष्य को जीवित रखती है तथापि यह भी सत्य है कि सुख की यह लालसा मन को संयम में करने की हमारी इच्छा-शक्ति का हनन करती है। सुख की स्पृहा को हम पाप नहीं कह सकते परन्तु यदि हम अनैतिक अथवा अत्यधिक इन्द्रिय-भोग में लिप्त हो जाते हैं तो इन भोगों से हमारा बंधन दृढ़ होता जाता है तथा हमारा बौद्धिक व आत्मिक विकास रुक जाता है। गीता में श्री कृष्ण कहते हैं

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥ [गीता, २:६७]

अर्थ: जिस प्रकार प्रचंड वायु अपने तीव्र वेग से जल पर तैरती हुई नाव को गंतव्य से भटका कर बहा कर दूर कहीं ले जाती है (हर लेती है) उसी प्रकार से अनियंत्रित इन्द्रियों मे से कोई एक जिसमें मन अधिक लिप्त रहता है, बुद्धि को हर लेती (उसका विनाश कर देती) है।

जिसके स्वभाव में सुख-भोग की लालसा विशेष रूप से बनी हुई है उससे 'सुख-भोग की स्पृहा त्यागो' कहना व्यवहारिक बात नहीं होगी। भारत के ऋषि-मुनि सत्य-दृष्टा होने के साथ मानव-मनोविज्ञान के भी सुदक्ष ज्ञाता व करुणावान उपदेशक थे। उन्होंने शिक्षा दी और सचेत किया कि यदि सुख की चाह है और

Mind control

The mind constantly generates desires in the pursuit of pleasure and enjoyment. Fulfillment of these desires makes the mind feel happy for sometime, but for most of the time the person remains so involved in his efforts to fulfill these desires that he does not become happy *(see: Hum Naa Bhooleen-13)*. Should a person give up the desire for pleasure and enjoyment?

We need to understand that, experiencing pleasure for which the mind continuously gives rise to feelings, are sensual-pleasures. The restlessness of the mind does not allow us to come to the state of **'sam'** (when happiness and sorrow seem equal, become irrelevant and have no effect on the mind) and we keep getting crushed between happiness and sorrow and are unable to get everlasting pleasure. Everlasting happiness will remain unachievable for us as long as the mind is not in control.

Mental instability (deformity) in life can be a terrible outcome when a person's mind is not in restraint. Many unfortunate events that occur in his life, may directly or indirectly harm him, other living beings, environment, nature etc. When we look into history, we find that many senseless wars were fought due to excessive ambition and desires (due to lack of control of mind) of a few. Many progressive civilizations have also died as a result of wrong acts due to the uncontrollable desires of mind.

The incontinence of the mind hinders the personality-development of a person. One whose mind is not in restraint may suffer from unusual mental disorders and his mental balance may deteriorate due to inner conflict. It is very probable that such a person can neither recognize his possibilities nor fulfill the expectations others have on him even in the most favorable circumstances. One whose mind is not in his control cannot attain peace of mind and one who does not have peace of mind cannot find happiness. Such a person may become victim of emotions, desires and tensions and suffer from incurable diseases (mental) or even become a criminal.

A person can neither make permanent progress in any field nor achieve prosperity and peace, without getting the mind under control. In the absence of restraint of mind a person can even lose his existing prosperity. We should make a note in our mind that the structure of our whole future life will depend on whether we have controlled our mind or not. After fulfilling the basic requirements of the body in life there could be some other things which may also be important, but for the complete attainment of personality, prosperity, goals and peace in life nothing can be more important than the composure. If we understand this and believe in it, then we can strengthen our will to control the mind.

It is not possible for a common man to live a life without satisfying the longing of 'pleasures'. This desire for happiness is natural and deeply ingrained in our mind and brain that it can only be removed with great difficulty. The only question before most of us is that if you do not live for pleasures, then what for should you live? This longing for 'pleasure and enjoyment' is a living force in humans and keeps a person alive. However this longing for happiness destroys our will-power to control the mind it is also true. We cannot call the desire for pleasure a sin, but if we indulge in immoral or excessive sensual-enjoyment, then our bond with these pleasures becomes firm and stop our intellectual and spiritual development. Shri Krishn says in Gita

indriyānām hi charatām yamanno-nuvidhīyate.
tadasy harti pragyām vāyurnāvmivāmbhasi [Gita, 2:67]

Meaning: Just as strong wind having high speed, diverts a floating boat from its destination and takes it away, in the same way, any one of the uncontrolled senses, in which the mind is more involved, leads the intellect astray (destroys it).

It would not be practical to ask a person whose nature is to always desire for pleasure and enjoyment to give them up. The sages of India, apart from being visionaries of truth, were also well-versed and compassionate preachers of human psychology. They taught and warned us that if there is a desire for pleasures and enjoyment, then care must be taken so that

www.humnaabhooleen.com

उसका भोग करना है तो ध्यान रखो कि तुम्हारा शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य बिगड़े नहीं, नष्ट न हो और न ही आत्मिक विकास रुके। यदि तुम्हे शारीरिक सुख चाहिए तो इस प्रकार भोग करो कि मानसिक सुख के उपभोग की क्षमता बनी रहे। मनुष्य सुख विषयों के पीछे ऐसे न दौड़े कि वे ऐन्द्रिक सुख उसे ही नष्ट कर दें। श्री कृष्ण कहते हैं:-

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥ [गीता, ५:२२]

अर्थ: जो ये इन्द्रियों व विषयों के संयोग से पैदा होने वाले भोग (सुख) हैं, वे यद्यपि विषयी मनुष्यों को सुखरूप भाते हैं तो भी ये निःसन्देह दुःख के ही हेतु (कारण) हैं। ये आदि-अन्त वाले अर्थात अनित्य हैं। अतः हे अर्जुन ! विवेकशील मनुष्य उनमें नहीं रमता।

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥ [गीता, ५:२८]

अर्थ: जिसने इन्द्रियाँ, मन व बुद्धि पर विजय पा ली है, जो इच्छा, भय और क्रोध से रहित हो गया है, ऐसा मुनि (मनुष्य) सदा मुक्त (सुख-दुःख से मुक्त) ही है। वह मोक्ष को पाने वाला है।

हमारी कामना (भाव, इच्छा) गलत दिशा मिलने से वासना बन जाती है। यह हम पर ही निर्भर है कि हम संसारिक विषयों की कामना करते हुए ऐन्द्रिक सुख के पीछे लग जावे अथवा संसारिक विषयों में ही मानसिक व आत्मिक संतुष्टि का मार्ग खोजें व आनन्द को पाएं।

हम सभी ने अपने जीवन में अनुभव किया होगा कि हम 'क्या सही व उचित है' जानते हुए भी उसका पालन नहीं कर पाते और इसी प्रकार यह जानते हुए भी कि 'क्या गलत व अनुचित है' उससे विरत नहीं हो पाते। हम बहुत अच्छे-अच्छे संकल्प करते हैं परन्तु उनके प्रति सजग होने से पूर्व, कार्यशील होने से पूर्व ही वे उसी प्रकार कहीं धुल कर नष्ट हो जाते हैं जैसे प्रचंड जलप्रवाह के सामने रेत का पुल। हम अपने ही संकल्पों के सम्मुख चकित, भ्रमित व हताश खड़े रह जाते हैं। कभी-कभी हमारा मन हमारे साथ छल करता है। जब हम किसी प्रलोभन, अपनी किसी दुर्बलता से संघर्ष कर रहे होते हैं तो अचानक हमारे मानस-पटल पर एक अधिक दुर्दशापूर्ण अवस्था का चित्र कौंध जाता है और हम भयभीत होकर चिंता में पड़ जाते हैं कि यदि ऐसी कठिनाईयाँ हमें घेर लें तो हम क्या करेंगे? अपने भविष्य की चिंता करने में हम अपना वर्तमान गँवा देते हैं।

हमे यह स्पष्ट रूप से समझना व स्वीकार करना होगा कि ऐसा कोई जादू नहीं है जिससे मन वश में हो जाए। मन को वश में करने के लिए मनुष्य को अपना जीवन अनुशासन से बिताना होगा। जीवन को रचनात्मक विचारों के ढांचे में ढालना होगा। मनुष्य के जीवन में एक निश्चित दैनिक क्रम होना चाहिए और साथ-साथ कुछ मूलभूत सिद्धांतों का पालन होना चाहिए। इससे हमारे कार्यों को एक दिशा प्राप्त होगी और साथ में नैतिक मूल्यों का भी पालन होगा जिससे हमारा आचरण दिशाहीन होने से बचेगा और मन की चंचलता में कमी आएगी। नैतिकता का पालन करने से मन की अपवित्रताएँ (तम गुण) कम होंगी जिससे मन निर्मल होगा।

(क्रमशः ...)

हम न भूलें कि

- हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ मन में इच्छाओं के निर्माण में सहायक होती हैं। मन को संयम में लाने के लिए इनका संयम में होना अनिवार्य है।
- मन का वश में होना आवश्यक है चूँकि इसके द्वारा ही कामनाओं की दिशा व नियंत्रण करने वाले विचार उत्पन्न होते हैं।
- कर्मेन्द्रियाँ यदि वश में होंगी और बुद्धि विकसित होगी तो हमारे विचार कदापि अनुचित, अनैतिक अथवा धर्म-विरुद्ध कर्म में परिवर्तित नहीं होंगे।
- हमारे कर्म ही हमारे स्वभाव, संस्कार व चरित्र का निर्माण करते हैं।
- हमारा चरित्र हमारा ही नही, अपितु समाज, राष्ट्र व संसार का भाग्य निर्धारित करता है।
- जब काम, क्रोध, लोभ, आदि दुर्गुण दूर होते जाएंगे तो मन शुद्ध (विकार रहित) होता जाएगा और बुद्धि के परामर्श को सहजता से स्वीकार करने वाला बनता जाएगा। ऐसे शुद्ध मन को वश में करना सरल होगा।
- मन को कुछ विचारकों द्वारा '**उभयेंद्रिय**' भी कहा गया है व इसे ग्यारहवीं इंद्रिय के रूप में प्रतिष्ठित करने के प्रयास हुए हैं। शास्त्रों व उपनिषदों में दस इन्द्रियों का ही उल्लेख है।

०२. १०. २०२२

physical and mental health of a person neither deteriorate, nor gets destroyed and the spiritual growth does not stop. If you want physical pleasure, enjoy it in such a way that the capability to enjoy mental pleasure is maintained. One should not run after sensory pleasures in such a way that they may ruin and destroy the person. Shri Krishn says:-

ye hi sansparshjā bhogā dukhyonay ev te
ādyantavantaḥ kauntey na teśhu ramate budh [Gita, 5:22]

Meaning: The pleasures arising from the interaction of the senses and material objects, although please the senses of humans who long for them, but are undoubtedly the cause of sorrow. They are never ending. Therefore, O Arjun! a prudent man does not indulge in them.

yatendrīy-mano-buddhir munir mokśh-parāynaḥ
vigatechchā-bhay-krodho yaḥ sadā mukt ev saḥ [Gita, 5:28]

Meaning: One who has conquered the senses, mind and intellect, who has become free from desire, fear and anger, such a sage (man) is always liberated (free from pleasure and pain). He is about to attain salvation.

Our wish (desire, thought) turns into lust when we get the wrong direction. It is up to us whether we should pursue sensual pleasures while wishing for worldly objects or find the path of mental and spiritual satisfaction in worldly objects and find happiness.

We all must have experienced in our lives, that we are not able to act properly even after knowing 'what is correct and appropriate' and similarly even on knowing 'what is wrong and inappropriate' we cannot get rid of it. We have very nice thoughts, take pledges but before even we become aware and act on them, they get washed away and destroyed just like a bridge of sand in a fierce flow of water. We are astonished, confused and frustrated at our own resolutions. Sometimes our mind deceives us. When we are struggling with some temptation, some weakness, suddenly a picture of a more miserable state flashes in our mind and we get afraid and worried about what we will do if such difficulties surround us? We waste our present worrying about our future.

We have to clearly understand and accept that there is no such magic with whose help mind can be controlled. To control the mind, a person has to lead a disciplined life. Life has to be molded into the framework of creative ideas. There should be a certain daily routine in the life of a human being and at the same time some basic principles should be followed. This will give a direction to our actions and at the same time moral values will also be followed. The restlessness of the mind will decrease and conduct will not become directionless. By following ethics, the impurities of the mind (tam guṇ) will be reduced, which will make the mind pure.

(to continue ...)

Let us not forget that

- Our sense organs are helpful in creating desires in the mind. To bring the mind in restraint, it is necessary to bring the senses under control.
- It is necessary to have control over mind, because it generates the thoughts that control and direct the desires.
- If the sense organs are under control and the intellect is developed, then our thoughts will never be converted into improper or immoral actions.
- Our actions create our nature, values and character.
- Our character determines not only ours, but the fate of society, nation and the world too.
- When lust, anger, greed, etc. will be removed, the mind will become pure (flawless) and will start accepting the advice of the intellect easily. It would be easy to tame such a pure mind.
- The mind has also been called '**ubhayendriy**' by some thinkers and efforts have been made to establish it as the eleventh sense. Only ten senses are mentioned in the scriptures and Upanishads.

02.10.2022

www.humnaabhooleen.com